P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-3* (Part-1) November- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

केदारनाथ सिंह की कविता की जमीनः अब हर शब्द एक वसीयत है

रामाश्रय सिंह
वरिष्ठ सहायक प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
म0 गां0 का0 विद्यापीठ,
वाराणसी

सारांश

केदारनाथ सिंह की कविता की जमीन के मूल में किसान है। किसान को ही लेकर अपनी कविता गढ़ते हैं। सार यह है कि किसान रोता बिलखता विवष दिखाई दे रहा है। गाय–बैल कसाईयों की मशीन पर गर्दन झुकाये खड़े हैं। थोड़ा बहुत पैदा हुआ गन्ना, गेहूँ, कपास, आलू आदि अनाज मण्डी के दलालों के चपेट में जा रहा है। जेनेटिक बीज के खेप, भारतीय किसानों के खेत में नखरे दिखा रही है। भारतीय किसानों का ''चुवई जस ओरी'' वाला आँसू है। अन्न दाता की दुर्दशा आखिर क्यों? उसकी बॉह थामने को कोई तैयार नहीं है। शोध लेख के माध्यम से कहना चाहता हूँ कि अपना पेट भरने वाले, तन ढकने वाले देश के लाखों किसानों और उनके परिवार के बहाने सम्पूर्ण भारत की किसानों की कथा है, जो वसीयत के रूप में रखी गयी है। इसके पीछे परम्परागत आस्था और उपयोगिता के बीच नयी पीढ़ी के सौन्दर्यबोध, कल्पना का अभाव है। स्वतंत्रता संग्राम में पनपे स्वप्न टूट गये। आज की युवाशक्ति स्वप्न मजबूत करने को तैयार नहीं है। इस समस्या को जीवन और साहित्य में हल पाने का रास्ता ढूढ़ना है। केदारनाथ सिंह जी की बड़ी कविता वही है, जो इस भूमि को सुन्दर बनाती है। चेतवानी भी देती है कि बड़ा ज्ञान वह है, जिससे व्यर्थ की चिन्ता नहीं होती, बड़ा आदमी वह जो जिन्दगी भर काम करता है। बड़ी वह रूह जो रोये बिना इस मन से निकलती है। ये पंक्तियाँ वसीयत है। जीवन हो या कविता उसके लिए बड़प्पन की खोज करे। यही उनकी कविता की जमीन है।

मुख्य शब्द : वसीयत, डिपार्चर, पुरबिहा, बतकहियों, खुशबू, घड़ियाल, चीन्हते, सहेजता, कुदाल, अनगढ़यता।

प्रस्तावना

सच का मुँह स्वर्ण आवरण से ढका है। आज के समय में भी सत्य है। बाजार के जबड़े में लोकतंत्र है। ऐसा भी एक समय था कि लोकतंत्र के भीतर बाजार था। सत्यमेवजयते की भावना खत्म हो गयी है। निराशा का समय है। (Past Truth) केदारनाथ सिंह की कविता सारी चीजों के बहजाते समय में, कुछ संजोय लेना चाहती है। मानवीय संदेश देती है। कहती है कि भारतीय संस्कृति का सार चालाकी नहीं सरलता है। लोक जीवन की कई चीजों को उठाते हैं। जैसे बरसात के समय जब धूप निकलती है तो कहा जाता है कि लोमड़ी का ब्याह हो रहा है। बच्चों के दॉत उखड़ जाने पर फेंका नहीं जाता। इसको दूब में गाड़ दिया जाता है तो इससे जल्दी से दाँत जमेंगे। इस तरह उनके सारे शब्द वसीयत की भूमिका में खड़ा होते हैं। उन्होंने आधुनिकता में बुद्धिवाद दिया, तर्कवाद दिया, यहॉ तक कि आधुनिकता वाउण्डरी बनाती है। पर सच्ची आधुनिकता वाउण्डरी तोड़ती है। वे शब्द से ही देखते, सुनते, सूँघते, स्वाद लेते और चीजों को छूते थे। शब्द ही उनके हाथ का टार्च था। वहॉ–वहॉ जाते हैं, जहॉ ताकत नहीं हैं, बल्कि पहले वहाँ गणतंत्र का पिछवाड़ा है।

स्नेह की मूर्तिमान छवि और अपने समय के श्रेष्ठ कवि केदारनाथ सिंह जी हैं। उनकी कविताओं में पूर्वांचल के माटी की सुगन्ध है। गहरी अचेतन, अनकही भावनाओं को शब्दों और छवियों में पिराने की कला अनूठी है। केदारनाथ सिंह को पढ़ना लम्बी टेर है। इनकी कविता की जमीन में संवदेना से लोक को आधुनिक लोक से बनते यथार्थ हैं। जो एक खास कोण के विचारधारा से जुड़ती है, सचमुच हर शब्द एक वसीयत लगते हैं। जैसे बाघ, उत्तर कबीर, बनारस, कस्बे की धूल, शव,''इन पंक्तियों को पढ़े तो वह डिपार्चर प्वाइण्ट दिखाई देता है। जो शब्दों के जादू से झरता है। वह लोक से शक्ति ग्रहण करती है, मिथकों को नये ढंग से संघान करती है। वह इतिहास विवेक के

साथ अवतरित होती है। कहना न होगा कि केदार नाथ जी की कविता गली–मोहल्ला बनाती–बसाती रही, बल्कि अपने पुरबिया ठाठ के साथ एक देशज छटा के कवि से मुलाकात कराती है। केदार नाथ जी हिन्दी और भोजपुरी के बीच अपना घर–देश खोजते पहचानते थे। जीवन और कविता को इस तरह मिलाने का ख्याल रखते थे कि दिल्ली बीच में न आने पाये। मेरे शोध लेख का मकसद केदार नाथ सिंह की कविता का आलोचना या समीक्षा करना नहीं है, बस यह समझना है कि उनकी कविता की जमीन में अब हर शब्द एक वसीयत कैसे हैं? इसके जबाब कई हो सकते हैं लेकिन मेरे लिए जो सबसे प्रिय जबाब है– सो यह है कि उनके व्यक्तित्व के अतिरिक्त उनकी कविता में मिलने वाली उस उष्मा में छुपा है, जिसका स्रोत जन है और जन की भाषा है।

साहित्यालोकन

मेरा मानना है कि केदार नाथ सिंह जी की कविता की जमीन खेती, किसानी, के औजारों से शुरू होकर लोक की पहचान कराती है। जहॉ वक्तव्य नहीं बतकहियों का संसार है। उदाहरणार्थ–होंठो को बहुत कुछ चाहिए/ उन्हें चाहिए' हॉ का नमक। और ना का लोहा। और कई बार दोनों/एक ही समय[1]। नैतिक परिपेक्ष्य के आलोक में केदार जी की कविता पढ़े तो–जीव–जन्तु, मनुष्य से लेकर प्रकृति का भौतिक–अभौतिकवास है । इस संसार में बैल हैं, आलू है सूर्यास्त है, बारिस है, मैदान में बच्चें हैं। मॉझी का पुल है– यानी आधुनिकता के ऐन्द्रिय सौन्दर्य। इस बात का ज्वलन्त उदाहरण है–अकेली बैल कविता पढकर गॉव का अदभूत बिम्ब दिखाई पड़ता है–वह जरा–सा हूंफता है। उसके कान खड़े हो जाते हैं। ध्यान रहे हॉफता नहीं हूंफता है, और वह समझ जाता है। यह भूसे की खुशबू है और एक नई उम्मीद के साथ अपने पूरे शरीर को बस्ती की नींद और गरमाहट पर छोड़ देता है। जुए के नीचे अपनी गर्दन रखकर जब चलता है उसके उठे हुए सींग सिवानों में चमकते रहते हैं। सूर्यास्त तक।[2] यह कवि की कविता की जमीन है।, गॉव में रचे, बसे कवि की आत्मा बैल हैं, पेड़ हैं, टमाटर बेचने वाली बुढ़िया, आलू इत्यादि गॉव में दिखाई पड़ने वाले मॉझी का पुल–महज इन सब के आधार पर पूरे गॉव की रूपरेखा उकेर देता है। यह शब्दों का वसीयत नहीं है तो और क्या हो सकता है? वसीयत का शाब्दिक अर्थ है–मेरे पूर्वजो ने हमें क्या दिया। किसी को मकान, किसी को दुकान मेरे हिस्से में बुढ़ी मॉ । यही तो वसीयत है। जो मरणोपरान्त अपनी सम्पत्ति का विभाजन (WILLS) है। यहॉ कविता की दृष्टि है। जैसे–अपने समाज, अपने गॉव, अपने खेत, अपने लोगों, अपनी स्मृति से इस तरह बॅधे हैं कि जब भी कविता लिखते हैं। शुरू इन्हीं सबके बीच से करते हैं। इन्हीं के बीच होते हुए उनके आशय अलग–अलग पग डण्डिया पकड़कर अलग–अलग इलाकों में दाखिल होते हैं।[3] वह शायद बाकी जगह दुर्लभ है। दरअसल केदार नाथ सिंह के कवित्व में, संकेतो में कही जाने वाली कविता का नया रूप है। जैसा कि ''जमीन पक रही है'' में ऑवे में पकती हुई मिट्टी की आभा दीख पड़ती है। मेरा मानना है कि मुहावरे के जादू का ही कमाल था। पानी में घिरे हुए लोग पानी की घेरेबन्दी में रात–रात भर खड़े रहने वाले लोगों के जीवन का वृतान्त है–वे रात पर खड़े रहते हैं। पानी के सामने। पानी की तरफ/ पानी के खिलाफ। इसी तरह बनास पर बहुत कुछ कवियों ने लिखा जैसे–राम कुमार चित्रकार, श्रीकान्त वर्मा, ने '''मगध में बनारस'' ज्ञानेन्द्रपति ने ''गंगा तट'' आदि ने अनेक कविताएं लिखी है। पर जिस एक कविता का बार–बार उल्लेख होती रही है वह है केदार जी की ''बनारस कविता ''। बनारस कविता में हर शब्द एक वसीयत की याद ताजा करा देती है। लगता है ये सारे शब्द जीवन के साथ रजिस्टर्ड हो जाते हैं। बनारस के लोक, अध्यात्म, दशाश्वमेघ के भिखारियों के कटोरों के खालीपन, नदी पर बॅधी नाव, बजते हुए घण्ट, घड़ियाल, उड़ती हुई धूल, रोज व रोज अनन्त शव ले जाते कंधे, शताब्दियों से अपनी एक टॉग पर खड़े इस शहर को उसकी प्राचीन गरिमा और वर्तमान के आलोक में चीन्हते–रचने का जैसा कुशल काम केदार जी ने किया है।[4] यह किसी कलाकार में नहीं दिखता। जैसे–आधा शव में, आधा नींद में, आधा शंख में, आधा पंण्डा में, आधा झण्डा में, आधा फण्डा में, आधा घाट में, आधा पाठ में, कहते हुए केदारजी बनारस की गांगेय आभा सुचित्रित लेख ही उकेर देते हैं। कविता का यह बनारसी कैनवस कम कवियों में दिखता है। दिखता भी है तो इस तरह का नहीं। जाहिर है कि आत्मा के सुनसान में उजाला भरता हुआ कवि अकाल में सारस तक पहुॅच कर चमत्कारिक प्रयोगों और विलक्षणता के कवि लगने लगते हैं। कवि अपने पुरबिहापन को अपनी ताकत बनाकर प्रस्तुत करता है–

इस समय यहॉ हूॅ
X X X
हर गिरा खून अपने अंगोछे से पोछता
मैं वही पुरबिहा हूॅ (एक पुरबिहा का आत्मकथ्य)
जहॉ भी हूॅ।

वे एक कवि उच्चादर्श भी सामने रेखते है। वे कृषक पिता के उन सूत्रों का हवाला भी देते हैं। जो उसने बेटे को दिए। यही वह गुण है! सूत्र है! जिसके लिए हम सभी कबीर को याद करते हैं, कभी तुलसी को कभी जायसी को, कभी घाघ को ......इसलिए कि कवियों से हमें सीख मिलती है। हमें सहेजता हुआ कि हरा पत्ता कभी मत तोड़ना। अगर तोड़ना तो ऐसे । कि पेड़ को जरा भी न हो पीड़ा। रात को रोटी जब भी तोड़ना। तो पहले सिर झुकाकर/गेहूॅ के पौधे को याद कर लेना। और सबसे बड़ी बात मेरे बेटे। कि लिख चुकने के बाद इन शब्दों को पोंछ कर साफ कर देना। ताकि कल जब सूर्योदय हों। तो तुम्हारी पटिया। रोज की तरह धुली हुई स्वच्छ चमकती रहे। कुछ सूत्र जो किसान बाप ने बेटे को दिये। अकाल में सारस यही काम खुद केदार जी ने किया। यही नहीं स्वच्छता अभियान में लिखते हैं। ''साइकिल की कविता''–इतनी गर्द भर गई है दुनिया में/ कि हमें खरीद लाना चाहिए एक झाड़ू/ आत्मा के गलियारों के लिए/ और चलाना चाहिए। दीर्घ एक स्वच्छता अभियान। मेरी समझ से मुक्तिबोध के इस स्वप्न का ही यह दूसरे शब्दों में भाषान्तरण है। यह दुनिया जैसी भी हो, इससे बेहतर चाहिए/ इसे साफ करने के लिए एक मेहतर चाहिए। सचमुच केदार नाथ सिंह का सौन्दर्य

बोध इतना संवेदी है कि वह पृथ्वी के ललाट पर उड़ते पक्षियों को एक मुकुट की तरह देखता है और दूर से ही देख कर खुशी से चिल्ला उठता है। बधाई हो, पृथ्वी बधाई हो। केदार नाथ सिंह को लोक की चिन्ता है, पृथ्वी की चिन्ता है। वे कहते हैं भी कि वे उस शख्स से मिलना चाहते थे जिससे उनका हृदय छन्द से मिले। यानी कोई बड़ा से बड़ा शख्स उनकी कविता में जगह नहीं पा सकता। उसके लिए उनके हृदय से जुड़ना जरूरी है। जैसे–'कब्रिस्तान में पंचायत' ऐसे ही रम्य निबंधों का संग्रह है जो केदार नाथ सिंह के कवित्व के पेंच खोलने में हमारी सहायता करता है।

यह कहना असंगत न होगा कि उनकी कविता की जमीन त्रिलोचन, निराला, मिलारेपा, भिखारी ठाकुर, कैलाशपति निशाद, देवेन्द्र कुमार बंगाली को याद करते हैं।[5] कुछ शब्द सूत्र जो वसीयत के रूप में हैं। आज भी हैं उसका उल्लेख करना चाहूँगा– मेरे बेटे कुएं में कभी मत झाँकना, हरा पत्ता कभी मत तोड़ना, अगर तोड़ना तो ऐसे कि पेड़ को जरा भी न हो पीड़ा, रात को रोटी तोड़ना तो सिर झुकाकर गेहूँ के पौधे को याद कर लेना। कभी लाल चीटिंयाँ दिखाई पड़े तो समझना ऑधी आने वाली है। कभी सुनाई न पड़े, सियारों की आवाज तो जान लेना, बुरे दिन आने वाले हैं, मेरे बेटे बिजली की तरह कभी मत गिरना और कभी गिर भी पड़े तो दूब की तरह उठ पड़ने के लिए तैयार रहना। कभी अंधेरे में अगर भूल जाना रास्ता तो ध्रुवतारा पर नहीं सिर्फ दूर से आने वाली कुत्तों के भूँकने की आवाज पर भरोसा करना। मेरे बेटे–बुद्ध को उत्तर कभी मत जाना, न इतवार को पश्चिम।[6] अन्त में जो वाक्य शीर्षक की उपयोगिता सिद्ध करती है वह सबसे बड़ी बात है– लिख चुकने के बाद इन शब्दों को पोंछकर साफ कर देना ताकि जब सूर्यादय हो तो तुम्हारी पटिया रोज की तरह धुली हुई। स्वच्छ चमकती रहे। यही नहीं एक पुरबिहा का आत्म कथ्य भी वसीयत के रूप में देखा जा सकता है–पर्वतों में मैं अपने गॉव का टीला हूँ पक्षियों में कबूतर भाखा में पूरबी, दिषाओं में उत्तर, वृक्षों में बबूल हूँ। अपने समय के बजट में एक दुःखती हुई भूल, नदियों में चम्बल हूँ, सर्दियों में एक बुढ़िया का कम्बल हूँ। कवि की जमीन के लिए हर गिरा खून अपनी अंगोंछे से पोंछता मैं वहीं पुरबिहा हूँ जहॉ भी हूँ।[7]

उपकल्पना

कुल मिलाकर इस देश में साम्प्रदायिक, कट्टरवाद और अन्ध राष्ट्रवाद को सबसे पहले बुद्ध, कबीर, सूर, तुलसी, प्रेमचन्द, निराला, नागार्जुन, से लड़ना होगा। केदारनाथ सिंह से लड़ने का मतलब कि केदारनाथ सिंह जैसे लोगों के भोलेपन को परास्त करना होगा। यानी जीवन विरोधी समय में जीवन के लिए जगह की तलाष तो रहेगी । जैसे–अमरूद कविता के बहाने शहर से अच्छा गांव है, जहॉ अमरूद की छॉव है।

शोध पद्धति

1. केदारनाथ सिंह की कविता किसी जादूगर की टोपी की तरह है। यानी शोध पद्धति में जादूई यथार्थ है।
2. कविता की भाषा आमजनों के बीच पूरे समाज में, पूरी सृष्टि में, उछलती कूँदती है। बेहद–शैली में बात करते हैं।
3. शब्द क्रीड़ा करते हैं यानी पूर्व निर्धारित अर्थ बिल्कुल बदल जाता है। वैज्ञानिक शोध पद्धति है।

अध्ययन का उद्देश्य

केदार नाथ जी के चिन्ताअें में सीधे–सच्चे लोग, कवि कथाकार होते हैं। कस्बाई और ग्राम्य छोटे शहर के जीवन की लय होती है, तो एक मामूली आदमी का मरना भी। हल, ट्रैक्टर और पहली बौछार उन्हें याद आती हैं, बुद्ध की मरती हुई नदी उन्हें चिन्ता में डालती है, तो पडरौना के किसानों का धीरज उन्हें आश्वस्त कराता है। किसानों की आत्महत्या पर किसानों से बातचीत करते हैं, हिरोशिमा, नागासाकी की परमाणु विस्फोट वीसवीं सदी की सबसे बड़ी चीख लगती है। इस लिहाज से देखें तो केदार जी एक अद्भूत कवि हैं, उससे उनके कवि मिजाज का पता चलता है। ऐसे आधुनिक संवेदना के कवि के प्रति पढ़े–लिखे समुदाय में अपनी तरह का आकर्षण रहा है। मुझे तो विस्मय होता है कि जरा सी बात को उठाकर वे कविता की जिस सूक्ष्म अनुभूति के तल पर ले जाकर छोड़ देते हैं। वह अनूठा है। जैसे–कुदाल, नमक, लोरी, खरोच, खर्राटे, जड़े, तुकें, ठीकरा, जूते, दाने, लरूआना, आदि। बढ़ई की तरह कोई भी खपच्ची उसके लिए उपयोगी होती है, उसी तरह केदारजी अपने इर्द–गिर्द घटित होने वाली हर चीज पर निगाह रखने वाले कवि हैं। यही नहीं द्वितीय विश्वयुद्ध की भयावहता, स्वाधीनता के बाद मोह भंग से गुजरे माहौल को महसूस किया। आपातकाल से गुजरे उदारतावाद, भूमण्डलीयकरण और बाजारवाद के संकटों को निकट से महसूस किया।

कहना न होगा केदार जी की कविता, क्राफ्ट और कला की है। कवि शहर आकर बदल नही गया है। उसके भीतर वह लोक, वह देशज बोध प्रारम्भ से अन्त तक कायम रहा। उनका कवि मन गॅवई रहा। पर उनकी कविता का नहीं। मेरा मानना है कि उनके कवि मन को गॅवई कह सकते हैं। वह तो आधुनिक सभ्य और अपने कथ्य में नवाचारी हैं। यही नहीं हर नई चीज, नए अनुभव को, विस्मय, कुतूहल और सहजता को केदारनाथ सिंह कल्पना की ऑख से देखते हैं। यही कारण है कि विस्मयता गॉव के आदमी का प्राथमिक लक्षण है। वह कोई भी नई बात कह रहा होता है तो शहरी बोध के साथ नहीं गॉव के चकित विस्मित कवि के रूप में, जैसे कृष्ण और सुदामा भाव हो, चकित होकर देखने वाला ''गॉव की कुदाल'' को शहर में किस तरह, किस जगह रखे। गॉव आने पर कैसा अनुभव करते हैं–जैसे–छू लूँ किसी को

लिपट जाँऊ किसी से मिलूँ..................बस मैं ही मिलूँ और दिल्ली न आये बीच में (गॉव आने पर/उत्तर कबीर एवं अन्यत्र कवितायें)

जाहिर है केदार नाथ सिंह अपनेपन के कवि हैं। जिसके अपनेपन में पूरी मानवता की, मनुष्यता गुजर रही है। यही विरासत भी है। वसीयत भी है। जैसे–पानी दिनों दिन लुप्त होने के कगार पर है, कुएँ हमारी सम्यता के–उजाड़ में खो चुके हैं। उन पर घास की मोटी सतह और कचरे का अंबार है। यही हमारी सभ्यता के मरने की शुरूवात भी है। दूसरी तरफ हालत यह है कि हमारे देश में नदियॉ जब कुछ नहीं करती। तब वे शवों का इंतजार

करती है। एक कवि का क्षोभ है। जिसकी नजर न केवल अपने गाँव, देश, कस्बा होता है बल्कि समूची विष्व मानवता, जिसके अन्तःकरण को अपनी करूणा से विचलित करती रहती है। इसका ज्वलन्त उदाहरण है– एक छोटे से छोटे घुन का नष्ट हो जाना भी पूरी तरह मानव सभ्यता के लिए बड़ी क्षति है। साधारण में अनन्यता है। यही कारण है कि केदार नाथ सिंह कभी विचारधारा के जड़ आग्रहों में नहीं बँधे। अपनी कविता को लाउड और नकली क्रान्तिकारिता का जामा नहीं पहनाया। वह मनुष्य की चित्त वृत्तियों के अनुभव को ही आत्मसात किया। वे अन्त तक जीवन में एक साधारण मनुष्यता और कविता में कविता कला के उच्चादर्शों की खोज करते रहे। उनके आदर्श, उनकी मानवता, उनका रोल मॉडल, उनका किसाान, उनकी अपनी चौहद्दी ही आज हमारे लिए वसीयत है। जो उनके कविता की जमीन में मिली हुई है, सनी हुई है।

निष्कर्ष

मुझे प्रेमचन्द का सूरदास याद आया। इसके साथ होरी और हल्कू भी याद आये। । इन सब को मैं वृद्ध किसान के रूप में देख रहा था। लेकिन जो चेहरा मेरे सामने है वह ठेठ पूरब के किसान का यानी केदार नाथ सिंह का जो आज भी मौसम पर विश्वास करता है। बाजार पर नहीं। आलू बोयें या न बोयें का जो द्वन्द्व था। किसानी जीवन में दुःख इसी तरह स्थगित होते रहते हैं, निरस्त कभी नहीं होते। कह सकते है कि पूरबी किसान कुछ अड़ियल होता है। कुछ अधिक संतोष धर्मी होता है। इसलिए हथिया का पानी भी उसके लिए एक आत्मिक समाधान बन जाता है। वास्तव में शब्द शक्ति ही पर उनका विश्वास था। क्योंकि मानवीय संवेदना को जगाने की शक्ति इसमें होती है। इस संदर्भ में यह बड़ा हथियार है प्रेम, करूणा मैत्री इत्यादि ही सौन्दर्य मूलक संवदेनाएं हैं।

अन्त में अपनी बात ''हाथ' से पूरा करूँगा–सच उनके मूल में एक ऐसी संवदेना है जो किसी भी तरह कविता के बीच मुरझाती नहीं, इसी वजह से उनका अनगढ़पन भी अपनी तरह का शिल्प बनाता है। जैसा कि ''हाथ शीर्षक'' में देखने को मिलती है, उसका हाथ अपने हाथ में लेते हुए मैंने सोचा, दुनिया को, हाथ की तरह गरम और सुन्दर होना चाहिए। जीवन की नैसर्गिक गरिमा के पक्षधर कवि की कविता हमारे समय की सर्वाधिक विश्वसनीय पुकार है, कारण कि उनके पास ठेठ निगाह है। ताड़ने में अचूक है। कौन नस कैसे फड़क रही है। जैसे भूलता तो यह भी जा रहा हूँ कि भूलता जा रहा हूँ मैं। आज के समय में दोनों प्रश्न चुनौतीपूर्ण है। कम होते जाते शब्दों के माहौल में उनके पास शब्दों की बहुलता थी। जीवंत और सक्रिय, जो सीधे उनके जमीनी काम से आये थे। लोक से आती इसी संजीवनी के केदार नाथ सिंह को हिन्दी का अनूठा कवि बनाया। उनकी कविता में एक जीवंत और सक्रिय समाज धड़कता है, बिना किसी जटिलता या नाटवीयता के। हिन्दी का सौभाग्य है कि वह हिन्दी की उपज थे। हिन्दी उन पर गर्व करें यह सर्वथा उचित है। उनकी भाषा वैसी थी, जैसी आम आदमी बोलता, समझता है लेकिन उसमें कई बार दार्शनिकों जैसी गहराई होती थी।

सन्दर्भ सूची

1– केदारनाथ सिंह–तो थे अभी बिल्कुल अभी–स्मरण लीलाघर मंडलोई नया ज्ञानोदय, अप्रैल, 2018, पृष्ठ–91।
2– ओम निष्चल–हिन्दी मेरा देश है। भोजपुरी मेरा घर केदार नाथ सिंह कवि व्यक्तित्व–नया ज्ञानोदय। 7 अप्रैल, 2018– पृष्ठ–14
3– प्रियदर्षन–जाना हिन्दी की सबसे खौफनाक क्रिया है। नया ज्ञानोदय अप्रैल, 2018 पृष्ठ–110
4– वही पृ0–14
5– वही पृ0–15
6– कविता–समय–केदार नाथ सिंह–नया ज्ञानादेय अप्रैल, 2018 पृ0–25
7– वही पृ0–31